राष्ट्र पुनर्निर्माण की चुनौती और शिक्षा

डॉ. आलोक भारद्वाज,

असिस्टेंट प्रोफेसर–प्राचीन भारतीय इतिहास,
विद्यांत हिन्दू स्नातकोतर महाविद्यालय,
लखनऊ

प्रारम्भ से ही भारतीय संस्कृति उदात्त आदर्शों व आकांक्षाओं पर अधिष्ठित रही है। आ नो भद्राः क्रतवो यन्तु विश्वतः में निहित सदाशयता के उत्तुंग शिखरों पर आरोहण करने वाली सर्वमंगलकारी भावना और चेतना इस राष्ट्र के उषःकाल में ही जातीय जीवन का मार्गदर्शक मन्त्र बन, इसके गन्तव्य और पाथेय का निश्चय कर चुकी थी। भारत ने अपने लम्बे इतिहास में जीवन के आध्यात्मिक मूल्यों की अवहेलना नहीं की है। उसने सत्य की खोज पर सदैव बल दिया है और सत्य के अन्वेषकों को हमेशा सम्मान प्रदान किया है।

भारत विश्व के प्राचीनतम राष्ट्रों में एक है। वैदिक ऋषियों के युग से आज तक उसकी राष्ट्रीय जीवनधारा विदेशी आक्रमणों की प्रचण्ड और लम्बी श्रृंखला के बावजूद अव्याहत और अप्रतिहत गति से प्रवाहमान रही है। भारत ने जीवन के समस्त क्षेत्रों में उपलब्धियों के अप्रतिम प्रतिमानों की सृष्टि की जिसके फलस्वरूप वह भौतिक एवं पराभौतिक ऐश्वर्य के अनुसन्धाताओं के सीमातीत आकर्षण का विषय आज तक बना हुआ है। वेद, उपवेद, वेदांग और कलाओं के निरवधि विस्तार द्वारा उसने परा और अपरा दोनों ही विद्याओं की चूडान्त साधना और साक्षात्कार कर न केवल अपनी अस्मिता के वैशिष्ट्य का संस्थापन विश्व रंगमंच पर किया, अपितु जगत को वसुधैव कुटुम्बकम् के अनुभूतिसिद्ध महत आदर्श से अनुप्राणित भी किया। इसीलिए जर्मनी के प्रसिद्ध दार्शनिक मैक्समूलर को यह कहने के लिए विवश होना पड़ा कि चाहे भाषा हो या धर्म, दर्शन हो या कानून, कला हो या विज्ञान मानव विचार का कोई भी क्षेत्र क्यों न हो, अगर आपने उसे अपने विशेष अनुशीलन के लिए चुना है तो चाहे आप पसन्द करें या नापसन्द किन्तु आपको भारत जाना ही होगा क्योंकि मानव इतिहास की सबसे अधिक मूल्यवान और मार्गदर्शक सामग्री का कोष सिर्फ उसी के पास है।[1]

पिछली सदी में जो आँधी भारतीय संस्कृति को लीलने के लिए पश्चिम से उठी थी, उस झंझा में भी हमारी नौका सागर के ऊपर संतरण करती रही, उसमें निमज्जित नहीं हुई। इस चमत्कार का मूल कारण था– हमारे द्वारा अपनी शाश्वत जीवनधारा से स्फूर्ति व बल की पुनः प्राप्ति। अतीत में अवगाहन की यह प्रक्रिया रूढ़िवादिता नहीं वरन् अपने मूल को खोजने का प्रयास था। उसका प्रभाव जीवन के प्रत्येक क्षेत्र में परिलक्षित हुआ। फलतः शिक्षा भी इसका अपवाद न रह सकी। हमने राष्ट्रीय पुनर्निर्माण जैसे मसले पर अपने जातीय जीवन के मार्ग दर्शक आदर्शों के सन्दर्भ में विचार करना आरम्भ किया।

बाह्य आक्रमणों के प्रतिरोध में निरन्तर व्यस्त रहने और युद्धोचित जीवन शैली अपनाने के कारण अथवा सुदीर्घ कालावधि में सहज रीति से पनपने वाली विकृतियों के फलस्वरूप मध्यकाल में भारत की संस्कृति अपनी पुरानी उच्चता एवं गरिमा को अक्षुण्ण न रख सकी। व्यक्तिगत और सामाजिक जीवन में चतुर्दिक भयंकर अवमूल्यन, क्षरण, पतन और ह्रास परिलक्षित होता है। नैतिक मूल्यों में जबर्दस्त गिरावट आई है। जनसंख्या

विस्फोट के कारण मंहगाई और बेरोजगारी की समस्या दिन पर दिन विकराल होती जा रही है। सामाजिक जीवन में पारस्परिक अविश्वास, सन्देह और कटुता का विष फैलता जा रहा है।

इन सब समस्याओं से शिक्षा का सीधा सम्बन्ध नहीं तथापि आज निर्विवाद रूप से यह स्वीकार किया जाता है कि शिक्षा राष्ट्रीय विकास का शक्तिशाली उपकरण है यही ऐसा माध्यम है जिसके द्वारा कोई राष्ट्र अपनी विरासत का प्रसारण और अन्तरण करता है, अपनी अर्थव्यवस्था को सुदृढ़ बनाता है तथा अपने मूल्यों का संरक्षण करता है। यह वैयक्तिक गुणोत्कर्ष की अभिवृद्धि का साधन है। राष्ट्रों का उत्थान मुख्य रूप से शिक्षा के माध्यम से हुआ और होता है। चूंकि विकास के आयाम अनेक हैं, अतः शिक्षा को समाज के जीवन, आवश्यकताओं और आकाक्षाओं के अनुकूल तथा प्रभावकारी बनाने के लिए बहुमुखी प्रयास अपेक्षित हैं।

जब 1910 में भारत की ब्रिटिश सरकार ने शिक्षा, स्वास्थ्य एवं भूमि विभाग का गठन पहली बार किया, उस समय उसका लक्ष्य राष्ट्र का सर्वांग उत्कर्ष न होकर ऐसी पीढ़ी तैयार करना था जो व्यक्तित्व–विहीन, सत्ता चाटुकार और लिपिक मात्र हो,[2] लेकिन डॉ. डी. एस. कोठारी ने भारतीय शिक्षा आयोग, 1964–66 के प्रतिवेदन में राष्ट्र के पुनर्निर्माण में शिक्षा की महत्वपूर्ण भूमिका को रेखांकित करते हुए कहा–In a world based on Science and Technology, it is education that determines the level of prosperity, welfare and number of persons coming out of school and colleges will depend on our success in the great enterprise of national reconstruction whose principal objective is to raise the standard of living of our people- डॉ. दौलत सिंह कोठारी शिक्षा को जनता के जीवन, आवश्यकताओं और आकांक्षाओं से सम्बद्ध कर सामाजिक, आर्थिक और सांस्कृतिक रूपान्तर के सशक्त उपकरण के रूप में ढालने को, उसका कायाकल्प करने को अन्य किसी भी सुधार की अपेक्षा अधिक महत्वपूर्ण मानते हैं।[3]

किन्तु कैसी विडम्ब है कि 7 मार्च, 1835 को मैकाले की जिस शिक्षा–पद्धति को स्वीकार किया गया, उसमें इतना समय बीतने के बाद भी आजतक कोई विशेष परिवर्तन नहीं हुआ है और हम उन दुष्परिणामों को भुगतते चले आ रहे हैं जिनकी भविष्यवाणी उसने 12 अक्टूबर, 1836, को पिता के लिए सम्बोधित पत्र में की थी– 'मेरा यह विश्वास है कि यदि हमारी शिक्षा योजनाएं जारी रहीं तो अब से तीस वर्ष बाद बंगाल में एक भी मूर्तिपूजक दृष्टिगोचर न होगा और यह सब केवल ज्ञान और चिन्तन की स्वाभाविक प्रक्रिया से सम्पन्न हो जायेगा। इस के लिये न तो हमें उनके धर्मान्तरण की कोई चेष्टा करनी होगी और न उनकी धार्मिक स्वाधीनता में थोड़ा भी हस्तक्षेप करना होगा।[4]

किसी भी देश का चारित्रिक पुनर्निर्माण उसकी समस्त उपलब्धियों की आधारशिला है। चरित्र का संकट सम्पूर्ण उत्थान के आयोजन को धूल में मिला देता है। चरित्र के बिना कोई भी विकास स्थायित्व को प्राप्त नहीं कर सकता। इसलिए नैतिक अभ्युत्थान समग्र मानवीय विकास की मूलभूत शर्त है। उसकी उपेक्षा कर विकास विनाश को निमन्त्रित करता है। स्वतन्त्र भारत में चरित्र और नैतिकता का संकट सबसे विकट संकट है। उसने हमारे जीवन की नींव को खोखला कर दिया है। भ्रष्टाचार देश की रग–रग में समा गया है। वह ऐसी अमर बेल है जिसने देश के जीवन–तरु की सारी हरीतिमा को चूस कर उसे निर्जीव कर दिया है। नैतिक प्रदूषण हमारे समय का सबसे भयंकर दैत्य है जो राष्ट्र की सारी शक्ति और पुरुषार्थ को निगल रहा है। देश को अनैतिकता और भ्रष्टाचार से बचाने में शिक्षा महत्वपूर्ण भूमिका सम्पादित कर सकती है। इस दृष्टि से उसे मूल्य प्रवण बनाना होगा।

मूल्य जीवन के वे दिशानिर्देशक तत्व होते

हैं जो व्यक्ति के शारीरिक और मानसिक स्वास्थ्य, समाज कल्याण और सामंजस्य के सहायक और प्रेरक होते हैं, साथ ही संस्कृति से जिनकी अनुकूलता रहती है।[5] मूल्य उन विश्वास और प्रत्ययों की संज्ञा है जो समय की कसौटी पर खरे उतरने के कारण समाज की अन्तरात्मा के अंग बन गए है–There are certain conviction, don'ts and does which if observed, pay in rich dividends, so far as the temporl life is concerned. It helps in harmonising individual and collective self and milk of humanity permeats through all the facets of collective human life. In this sence values are deep conviction and faith in certain facts, ideas, concepts and beliefs which have stood the test of time.[6] भावना का गहरा पुट होने के कारण हालांकि उन्हें मुख्यता आत्मनिष्ठ मानते हैं, यही उनकी शक्ति का रहस्य है।[7]

सन्तुलित व्यक्तित्व के लिए मूल्यों का सुदृढ़ आधार अपेक्षित है। मूल्यों के बिना व्यक्तित्व अविकसित और अपूर्ण रहता है। वे कर्म और विचार को आन्तरिक शक्ति तथा एकता प्रदान करते हैं। स्वभाव का गठन समय साध्य कार्य है जिसके लिए आन्तरिक एवं वाह्य प्रेरणाओं की आवश्यकता होती है।[8] यह प्रेरणा हमें मूल्य समष्टि अथवा नैतिकता से ही प्राप्त होती है। नैतिकता उस आचरण संहिता को कह सकते हैं जिसे समाज की स्वीकृति प्राप्त रहती है। वे उच्च स्तरीय सिद्धान्त, जिनमें सभी धार्मिक शिक्षाओं का समावेश रहता है और जो अपने अन्दर वह सब समाहित रखते हैं जो हर किसी के लिए सर्वोत्तम है, नैतिकता की संज्ञा से विभूषित किए जाते हैं। समाज की जीवनधारा के मुख्य आधारों से यह अपने सिद्धान्त ग्रहण करती है। इन्हीं पर सामाजिक ढांचा अवस्थित रहता है।[9]

दूसरे शब्दों में नैतिकता सुविकसित समाज का ऐसा आचार है, जिसका आधार मूलभूत सिद्धान्तों की पकड़ है। इसमें संस्कृति, धर्म, विरासत और सारी सामाजिक संस्थाएं सम्मिलित रहती हैं। व्यक्तित्व विकास में मूल्यों की उपेक्षा समाज के सांस्कृतिक और दार्शनिक धरातल से विचलन के कारण मूल्यों के ह्रास को जन्म देती है।

1986 की नई शिक्षा नीति में अनुभव किया गया था, कि पाठ्यक्रम में सामाजिक और नैतिक मूल्यों का समावेश किया जाना चाहिए ताकि सामाजिक जीवन में मूल्यों के विघटन और अनैतिकता के आक्रमण को हतोत्साहित किया जा सके–The growing concern over the erosion of essential values and an increasing cynicism in society has brought to focus the need for re-adjustment in the curriculum in order to make education a forceful tool for the cultivation of social and moral values. In our culturally plural society education should foster universal and eternal values, oriented towards the unity and integration of our people.[10] मूल्यों की प्रत्यक्ष शिक्षा मनोविज्ञान की दृष्टि से असफल रहती है। परोक्ष रीति से मूल्यों को उस वातावरण में घुला–मिला होना चाहिए जहाँ छात्र रहता है, खेलता है, गाता गुनगुनाता है। कहानी, कविता, रोचक प्रेरक प्रसंग इस दृष्टि से उपादेय होते है। सामूहिक प्रार्थना तथा सेवा कार्य नैतिकता को जीवन में ढाल सकते हैं। अध्यापक का प्रेरक जीवन छात्रों को सर्वोत्तम दिशादर्शक हो सकता है।

शिक्षा की प्रभावोत्पादकता संस्कृति से जुड़कर न केवल बढ़ जाती है बल्कि उसकी दिशा भी सकारात्मक हो जाती है। वह साक्षर को राक्षस बनने से रोकती है। संस्कृति की उपेक्षा करने वाली शिक्षा इस बात को अनदेखा कर देती है कि आदमी सिर्फ रोटी से ही जीवित नहीं रहता, उसके जीवन का तानाबाना संस्कृति और धर्म से बुना रहता है। संस्कृति एक जीवन्त सत्ता की तरह निरन्तर बढ़ने की क्षमता रखती है, वह गतिशील है। डॉ. निगम का मत है कि संस्कृति की समृद्धि चरित्र की शक्ति से प्रत्यक्ष सम्बन्ध

रखती है। जिस देश की अपनी विशिष्ट संस्कृति नहीं उसे भौतिकवादी जीवनदृष्टि की ओर उन्मुख करने वाले वैज्ञानिक एवं तकनीकी विकास के सम्मुख स्थिर रहना असम्भवप्राय है। भारत शताब्दियों तक अपनी सांस्कृतिक विरासत के लिए सुपरिचित रहा है, जिसकी मुख्य राष्ट्रीय धारा में अनेक वाह्य पद्धतियाँ समय के साथ एकाकार होकर भी अपनी पृथक अस्मिता सुरक्षित रखे हुए है। इस तरह भारतीय संस्कृति वादे–वादे जयते तत्वबोधः या विविधता में एकता का अद्भुत उदाहरण प्रस्तुत कर रही है।[11]

भारतीय संस्कृति के आदर्शों को प्रतिबिम्बित कर शिक्षा जीवन को न केवल समृद्धि प्रदान कर सकती है, उसे दुनिया में विशिष्ट गौरव भी दिला सकती है, सर्व–धर्म समादर की प्रेरणा देकर सौहार्द, सौमनस्य और सह–अस्तित्व की दिशा भी दिखा सकती है। संस्कृति प्रवण शिक्षा व्यक्तित्व में कर्तव्य और अधिकारों का सन्तुलन पैदा करती है, व्यक्ति और समाज में सामंजस्य उत्पन्न करती है, भोग और त्याग का समन्वय कर उसे सौन्दर्य से मण्डित करती है, गुणग्राहकता, उदारता, सम्वेदनशीलता, कर्मठता, अनुकूलन आदि क्षमताओं को विकसित करती है। इस तरह शिक्षा द्वारा सांस्कृतिक और नैतिक पुनर्निर्माण का गुरुतर कार्य बड़ी कुशलता के साथ सम्पन्न किया जा सकता है।

शिक्षा आर्थिक समृद्धि की सम्वाहिका बन सकती है। पुराने विचारकों ने भी मस्तिष्क और हृदय के साथ ही साथ हाथ के विकास को महत्व दिया है। आर्थिक उपक्रम में मानव संसाधन का स्थान सर्वोपरि है। विकासशील देशों में प्रशिक्षित और कुशल जनशक्ति बहुत महत्वपूर्ण है। भौतिक संसाधन बाहरी देशों से जुटाए जा सकते हैं, किन्तु मानवीय क्षमताओं को उनके अनुरूप यथेच्छ नहीं बढ़ाया जा सकता है। इससे आर्थिक विकास अवरुद्ध हो जाता है। शिक्षा मानवीय उद्यम के उत्पादकता–मूल्य को बढ़ाती है, ज्ञान और कौशल में वृद्धि करती है। अतः शिक्षा पर धन खर्च करना वर्तमान और भविष्य के लिए विनियोग है–Education is a unique investment in present and the future. This cardinal principle is the key to the national policy on education. डॉ. डी. एस. कोठारी राष्ट्रीय पुनर्निर्माण में मानव संसाधन के विकास को प्रमुखता प्रदान करते हैं।[12]

किसी भी राष्ट्र के सशक्तिकरण के लिए आवश्यक है ऐसी शिक्षा जो सर्वसुलभ हो। 1937 कांग्रेस के वर्धा अधिवेशन में महात्मा गांधी ने अनिवार्य प्राथमिक शिक्षा पर एक प्रस्ताव रखा और 6 से 14 साल की आयु के बच्चों की अनिवार्य शिक्षा के लिए राष्ट्रीय शिक्षानीति निर्धारित करने की अपील की। इसे 1947 के पश्चात भारतीय संविधान में स्वीकृति दे दी गई। इस दिशा में समय समय पर कई कार्ययोजनाएँ बनाई गईं किन्तु प्राथमिक शिक्षा का हमारा तंत्र इच्छाशक्ति के अभाव भ्रष्टाचार, शिक्षा को सबसे नीचे प्राथमिकता देने और देश के भविष्य की उपेक्षा कर राजनैतिक गोटिया चलने में संलग्नता के कारण पूरी तरह तिरस्कृत है। इसदिशा में सुधार के लिये पूरी गंभीरता से युद्धस्तर पर प्रयास करने की आवश्यकता है।

तकनीकी शिक्षा जनशक्ति को प्रशिक्षित कर कुशलता प्रदान करती है। वह मानव पूंजी का निर्माण करती है, कार्य शक्ति को तीव्र करती है और प्राकृतिक साधनों का दोहन करने के लिए तकनीकी ज्ञान का विकास करती है। शिक्षा काम के नए अवसर दे सकती है। तकनीकी काम के लिए डिजाइनिंग पाठ्यक्रम, इलेक्ट्रीशियन, स्कूटर, मोटर मैकेनिक्स, प्लम्बर, लाइनमैन आदि और गैरतकनीकी में भोजन बनाना अन्तः–सज्जा, घरेलू नौकर, आया, शिशुचर्या, कार्यालय सेवक आदि के अवसर सुलभ हो सकते हैं।

भारत में अधिकांश जनसंख्या कृषि में संलग्न है। हमारे यहाँ साक्षरता भी बहुत आशान्वित करने वाली नहीं है, जिसमें अधिकांश लोग कॉलेज तक

पहुँच ही नहीं पाते। सामाजिक जीवन की गुणवत्ता योग्य जनशक्ति पर निर्भर है। इसके लिए सजगता तथा वैज्ञानिक और प्रौद्योगिक प्रगति का मूल्यांकन और समझदारी आवश्यक है। व्यवसाय–मूलक पाठ्यक्रमों का लक्ष्य दिमागी खुलेपन, बौद्धिक गहराई और विस्तार तथा जाति के मूल्यों एवं आदर्शों में अन्तर्दृष्टि का विकास होना चाहिए। सामान्य कला और विज्ञान के पाठ्यक्रम सरकार, व्यवसाय और उद्योगों के जरूरतों से तालमेल रखकर संचालित होने चाहिए।

औद्योगीकरण की तेज रफ्तार से समाज को जिस अभिशाप का सामना करना पड़ रहा है, जिसके कारण जल, वायु, आदि में प्राणघातक विष का मिश्रण होकर लोगों के जीवन के लिए भयंकर संकट बन गया है, मानव बस्तियाँ गंदे स्लम क्षेत्रों में बदल कर आधुनिक अपसंस्कृति के अड्डों के रूप में बढ़ती जा रही है, उस अभिशाप का नाम है प्रदूषण। शिक्षा इस प्रदूषण के विरुद्ध जनचेतना जगाने का, जनता को संकटों से आगाह करने और बचाव के लिए प्रशिक्षित करने का सशक्त माध्यम है। पर्यावरण शिक्षा पर्यावरण जागरूकता का आधुनिक शास्त्र है–Environmental education is the process of recognizing values and clarifying concepts in order to develop skills and attitudes necessary to understand and appreciate the inter-relatedness among man his culture and his bio-physical surroundings. Environmental education also entails practice indecision-making and self-formulation of a code of behaviour about issues concerning environmental quality-[13]

पर्यावरण शिक्षा को औपचारिक शिक्षा के सम्पूर्ण तन्त्र से हर स्तर पर संयुक्त कर देना चाहिए। उसके प्रति पवित्रता मूलक परिप्रेक्ष्य अपनाया जाना चाहिए। वह कोई मौलिक शास्त्र नहीं वरन् विभिन्न शास्त्रों से अन्तःसम्बन्ध रखता है जैसे भू–भौतिकी, मौसम विज्ञान, समुद्रविज्ञान, पारिस्थितिकी, रसायनविज्ञान, भौतिकशास्त्र जीवविज्ञान, गणित, अभियान्त्रिकी आदि। यह वास्तविक जीवन से जुड़ी व्यावहारिक समस्याओं पर केन्द्रित होती है और मूल्यबोध निर्मित करने का लक्ष्य लेकर चलती है। जागरूकता, जानकारी, अभिवृत्ति और सहभागिता उसका चतुर्मुखी उद्देश्य है।

शिक्षा राष्ट्रीय एकात्मकता का सशक्त माध्यम बन सकती है। राष्ट्रीय एकात्मता का आशय है राष्ट्र के प्रति वयम्–भाव। प्रो० हुमायूं कबीर के शब्दों में– "Nationalism is that which depends on we feeling towards the Nation". हान्सकोहन इसे मस्तिष्क की ऐसी अवस्था मानते हैं जिसमें व्यक्ति राष्ट्र के प्रति सर्वोच्च निष्ठा को अनुभूति करता है।[14] रेनन ने 1832 में सारबोर्न में अपने एक अभिभाषण में राष्ट्र को एक आध्यात्मिक सिद्धान्त के रूप में प्रस्तुत किया–राष्ट्र निर्माण में भूतकालीन कार्यों की स्मृति तथा भविष्यत्कर्म को सिद्ध करने की महत्वाकांक्षा उल्लेखनीय है। राष्ट्र एक आत्मा है एक आध्यात्मिक सिद्धान्त है जिसकी जड़ें लोगों के हृदय में गहरी जमी हुई हैं। राष्ट्र व्यक्ति की भांति परिश्रम, बलिदान एवं भक्ति से उद्भूत अतीत का परिणाम होता है। उपलब्धि एव कष्ट–सहन की गाथाएं राष्ट्रवासियों को एक साथ बांधती हैं। जब विशाल सांस्कृतिक निधि का संरक्षण करने की भावना जनसमाज को आप्लावित करती है तो राष्ट्र की कल्पना का विस्तार होता है। स्पेंगलर भी उसको भाषागत राजनैतिक या जैविक अस्तित्व न मानकर आध्यात्मिक एकता की अभिव्यक्ति मानते है।[15] शिक्षा राष्ट्रीय एकात्मता का सबसे अधिक सशक्त माध्यम हैं। यह देश की मूलभूत एकता की मनोवैज्ञानिक प्रक्रिया है जिसमें शिक्षा की सबसे महत्वपूर्ण भूमिका है–National integration is a psychological and educational process involving the people, a sense of common citizenship and cohesion in the hearts of the people, a sense of common citizenship and a feeling. of loyality to

the Nation.[16]

कोठारी कमीशन के मत में राष्ट्रीय एकात्मता में राष्ट्र के भविष्य में आस्था, जीवन स्तर में निरन्तर उन्नयन, मूल्य और कर्तव्य भावना का विकास, एक श्रेष्ठ और निष्पक्ष प्रशासन तथा पारस्परिक समझदारी का सन्निवेश रहता है।[17] कार्लटन हेज उसे देशभक्ति और राष्ट्रीयता का संयोजन मानते है।[18] श्री अरविन्द मातृभाव से मातृभूमि की उस उपासना का उल्लेख करते हैं जिसकी तीव्र उत्कण्ठा तुच्छ प्रलोभन और भय को विलीन कर ऐसी देशभक्ति का अवतरण करती है जो नष्ट प्राय देश के उद्धार में विस्मयकारी रूप से सफल और सक्षम होती है।[19] किसी देश की एकता एकरूपता पर निर्भर नहीं होती। आत्मीयता का अटूट धागा ही इसका मूल आधार है—It is the feeling of oneness a sense of belongingness and sharing the common heritage- It depends on the determination and will of the people. It is more psychological or emotional than external or organisational. Of course, external factor like geographical continuity, historical identity, religious similarity, linguistic, political or economic unity greatly promote such psychological matter-[20]

राष्ट्रीय एकात्मता एक ऐतिहासिक और मनोवैज्ञानिक चेतना है जो सांस्कृतिक निष्ठा और समष्टि चेतना के द्वारा स्वयं को अनावृत करती है। यह मूलतः एक नैतिक और आध्यात्मिक वृत्ति है, न कि सामूहिक अहंकार का प्रदर्शन अथवा मिथ्या जातीय दर्प का पोषण। उसका शुद्ध रूप तभी प्रकाशित होता है जब व्यापक लोकहित की चेतना उसे आप्लावित रखे।[21]

क्षेत्रवाद, भाषावाद, प्रान्तवाद, सम्प्रदायवाद, पृथकतावाद, उग्रवाद, जातिवाद आदि प्रवृत्तियाँ भारत की राष्ट्रीय एकता के लिए वाह्य आकमणों से भी अधिक भयावह चुनौती प्रस्तुत कर रही हैं। इनका सफल मुकाबला करने के लिए पाठ्यक्रमीय और पाठ्यक्रमेतर कार्यक्रमों की रचनाओं और क्रियान्वयन पर ध्यान देना आवश्यक है।

डॉ. जगन्नाथ मोहंती लिखते हैं कि हमारे समाज में संस्कृतियों की विविधता है, इसीलिए हमारी शिक्षा का नियोजन इस तरह किया जाना चाहिए जिससे भारतीय जन की एकता परिपुष्ट हो, सनातन और विश्वजनीन मूल्य प्रोत्साहित हों तथा भावनात्मक समन्वय और मनोवैज्ञानिक संतुलन विभिन्न पाठ्य और सहपाठ्य क्रियाकलापों द्वारा छात्रों और नागरिकों में विकसित हो।[22]

सन्दर्भ ग्रन्थ सूची

1. मैक्समुलर इंडियाः व्हाट कैन इट टीच अस पृष्ठ—15
2. परांजपे, ए सोर्स बुक ऑफ मॉडर्न इंडियन एडुकेशन पृष्ठ—28
3. कोठारी, डॉ. दौलत सिंह, भारतीय शिक्षा आयोग प्रतिवेदन, पृष्ठ—6
4. मोहंती, जगन्नाथ, मॉडर्न ट्रेड्स इन इंडियन एडुकेशन, पृष्ठ—71
5. उपरोक्त, पृष्ठ—12
6. अहलूवालिया, एस.पी., एडुकेशनः इश्यूज एंड चौलेंजेज, पृष्ठ—2
7. हर्लोक, ई. बी. चाइल्ड डेवेलपमेंट, पृष्ठ—8
8. अरस्तू, (उद्धृत—अहलूवालिया, एस.पी., एडुकेशन इश्यूज एंड चौलेंजेज, पृष्ठ—6)
9. उपरोक्त पृष्ठ—6
10. नेशनल पोलिसी ऑन एडुकेशन पृष्ठ—3
11. निगम, बी. के. हिस्ट्री एंड प्रोब्लेम्स ऑफ इंडियन एडुकेशन, पृष्ठ—219
12. कोठारी कमीशन रिपोर्ट, पृष्ठ—89
13. अहलूवालिया, एस. पी. एडुकेशनः इश्यूज एंड चौलेंजेज, पृष्ठ—45

14. हान्सकोहन, नेशनलिज्मः इसे मीनिंग एंड हिस्ट्री, पृष्ठ–8
15. राजपुरोहित, कन्हैयालाल, आध्यात्मिक राष्ट्रवाद, पृष्ठ–5
16. अहलूवालिया, एस. पी. एडुकेशनः इश्यूज एंड चैलेंजेज, पृष्ठ–147
17. कोठारी कमीशन रिपोर्ट, पृष्ठ–25
18. हेज, कार्लटन, नेशनलिज्मः ए रिलिजन, पृष्ठ–12
19. अरविन्दो, द ऑवर ऑफ गॉड खंड–17 पृष्ठ–374
20. मोहंती, जगन्नाथ, मॉडर्न ट्रेंड्स इन इंडियन एडुकेशन, पृष्ठ–278
21. राजपुरोहित, कन्हैयालाल, आध्यात्मिक राष्ट्रवाद, पृष्ठ–5
22. मोहंती, जगन्नाथ, मॉडर्न ट्रेंड्स इन इंडियन एडुकेशन, पृष्ठ–288

Copyright © 2016, Dr. Alok Bhardwaj. This is an open access refereed article distributed under the creative common attribution license which permits unrestricted use, distribution and reproduction in any medium, provided the original work is properly cited.